# विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2558, ज्येष्ठ पूर्णिमा, 13 जून, 2014 वर्ष 43 अंक 12

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx


## धम्मवाणी

**येसञ्च सुसमारद्धा, निच्चं कायगता सति।**
**अकिच्चं ते न सेवन्ति, किच्चे सातच्चकारिनो।**
**सतानं सम्पजानानं, अत्थं गच्छन्ति आसवा॥**
*धम्मपद- २९३, पकिण्णकवग्गो.*

जिनकी कायानुस्मृति नित्य उपस्थित रहती है (यानी, जो सतत कायानुपश्यना करते रहते हैं, काया में होने वाली संवेदनाओं के प्रति जागरूक रहते हैं), वे (साधक) कभी कोई अकरणीय काम नहीं करते, सदा करणीय ही करते हैं। (ऐसे) स्मृतिमान और प्रज्ञावान (साधकों) के आश्रव क्षय को प्राप्त होते हैं (उनके चित्त के मैल नष्ट होते हैं)।

## प्रज्ञा का अभ्यास : विपश्यना साधना

**नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स**

*(यह 'चतुर्थ विश्व बौद्ध शिखर सम्मेलन', म्यंमा में ९ दिसंबर, २००४ को दिवंगत विश्वविपश्यनाचार्य श्री गोयन्कजी ने जो प्रवचन दिया था, उसका संक्षिप्त स्वरूप, भाग ३ है। विपश्यना विशोधन विन्यास की 'Pilgrimage to the Sacred Land of Dhamma' नामक अंग्रेजी पुस्तक में पूरा प्रवचन छपा है।)*

परम आदरणीय भिक्षुसंघ एवं धर्ममित्रो!

इस व्याख्यान में हम धर्म के सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष पर विचार करेंगे। वह है प्रज्ञा (***पञ्ञा***) का, जिसे अनुभूतिपरक ज्ञान कहते हैं। वह ज्ञान जो हमारी अपनी अनुभूति पर उतरे। भगवान बुद्ध की शिक्षा तभी फलदायी है जबकि उसका स्वयं अभ्यास किया जाय।

भगवान ने ऋषिपत्तन मृगदाय वन में जब प्रथम धर्मोपदेश दिया तब कहा कि चार आर्यसत्य तभी वास्तविक आर्यसत्य हैं जबकि कोई प्रत्येक को तीन-तीन प्रकार से अपनी अनुभूति पर उतार कर बारह प्रकार से जानता है-- ***तिपरिवट्टं द्वादसाकारं।*** बुद्ध के अनुसार इस शरीर के अंदर जो कुछ भी अनुभव करते हो वह दुःख ही है-- ***यं किञ्चि वेदयितं, तं दुक्खस्मिन्ति।***

चार आर्यसत्यों में भी यही बात है। सभी स्वीकार करते हैं-- सर्वत्र दुःख ही दुःख है। चाहे धनी हो या निर्धन, शिक्षित हो या अशिक्षित, पुरुष हो या नारी, सभी दुःखी हैं। बीमारी, बुढ़ापा, मृत्यु, शोक, उपायास, प्रिय से वियोग, अप्रिय से संयोग, मनचाही का न होना, अनचाही का होना, संक्षेप में पांच स्कंध और उनके प्रति चिपकाव (गहरी आसक्ति) ही दुःख है।

बुद्ध ने कहा दुःख आर्यसत्य परिज्ञेय है अर्थात दुःख को पूरी तरह जानना है, इसके पूरे क्षेत्र को जानना है, और वहां तक जानना है जिसके परे दुःख नहीं है।

जब लोग विपश्यना शिविर में आते हैं तब प्रारंभ करते ही कहीं दबाव, कहीं दुखाव, कहीं भारीपन, कहीं खुजलाहट आदि-आदि बहुत ही अप्रिय संवेदनाओं का अनुभव करते हैं। लेकिन इस अवस्था में भी अनुभव करते हैं कि हर संवेदना चाहे कितनी ही अप्रिय क्यों न हो, सतत नहीं रहती। देर-सबेर बदल ही जाती है। इस प्रकार वे अपने अनुभव से जानने लगते हैं कि प्रिय-अप्रिय हर संवेदना उदय-व्यय स्वभाव वाली है और समय पाकर बदल जाती है।

कुछ दिनों के बाद साधक उस अवस्था पर पहुँचता है जहां शरीर का सारा ठोसपना समाप्त हो जाता है, पिघल कर एक धाराप्रवाह में बदल जाता है। उसे अनुभव होने लगता है कि नाम और रूप के क्षेत्र में जो कुछ भी जाना जाता है वह मात्र प्रकंपन ही प्रकंपन है। सर्वत्र कलाप ही कलाप हैं, जिनका बहुत द्रुतगति से उदय-व्यय हो रहा है। इसी को बुद्ध ने सतिपट्ठानसुत्त में कहा कि साधक समुदय-व्यय को देखते हुए काया में विहार करता है-- ***समुदयवयधम्मानुपस्सी वा कायस्मिं विहरति।***

हर वस्तु अनित्य है, क्षणभंगुर है, कहीं ठोसपन नहीं है। दुःख वेदना को दुःख कहना आसान है। चूंकि वह अप्रिय है इसलिए लोग उसे दुःख कहते हैं। परंतु जब भंग-ज्ञान की अनुभूति होती है और साधक में प्रज्ञा नहीं हो तब उसे वह सुख मानने लगता है और उससे आसक्त हो जाता है। लेकिन प्रज्ञावान साधक समझता है कि यह भंग अवस्था भी स्वभाव से अनित्य है। अतः वह तटस्थ बना रहता है और समझता है कि यह बड़ी खतरनाक स्थिति है। इसके प्रति आसक्ति जगा कर अधिक गहरे बंधन में बँधने का खतरा है। जितना सुखद अनुभव, उतनी गहरी आसक्ति और जितनी गहरी आसक्ति उतना गहरा दुःख होता है।

साधना करते-करते ***उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति, उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति..,*** गहरे दबे संस्कार उभर-उभर कर ऊपर आते हैं और नष्ट होते हैं। साधक अनुभव के धरातल पर तटस्थभाव से उन्हें देखता है और समझता है कि ये अनित्य हैं, दुःख हैं, और अनात्म हैं। ऐसा समझ कर वह नये संस्कार नहीं बनाता।

साधक स्पष्टरूप से देखता है कि जिसे मैं या मेरा कहता हूं उसमें कुछ भी सार नहीं है। यह मात्र भ्रम है, मरीचिका है। ***सुञ्ञमिदं अत्तेन वा अत्तनियेन वा।*** तब वह अंतिम विशुद्धि प्राप्त करता है और मुक्ति की चार अवस्थाओं-- स्रोतापन्न, सकृदागामी, अनागामी और अरहंत तक के मार्ग-फल को प्राप्त करता है।

जब कोई निर्वाण की अनुभूति करता है तभी कहा जाता है कि उसने दुःख के समूचे क्षेत्र की गवेषणा कर ली, उसे भली प्रकार देख लिया-- ***दुक्खं अरियसच्चं परिञ्ञातं...।***

उसी प्रकार बुद्ध ने कहा कि द्वितीय आर्यसत्य को भी तीन प्रकार से जानता है -- ***दुक्खसमुदयं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं पहातब्बं*** *और* ***दुक्खसमुदयं अरियसच्चं पहीनं।*** यह दुःख का कारण है, यह कारण को दूर करना है और यह कारण को दूर कर दिया गया।

तीसरे आर्यसत्य के बारे में भी उपदेश देते हुए कहा-- ***दुक्खनिरोधं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं सच्छिकातब्बं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं सच्छिकतं।*** यह दुःखनिरोध आर्यसत्य है, दुःखनिरोध आर्यसत्य का साक्षात्कार करना है, दुःखनिरोध आर्यसत्य का साक्षात्कार कर लिया। यों तृतीय आर्यसत्य को तीन प्रकार से अनुभव कर लेता है।

अंत में चौथे आर्यसत्य के अनुभव की व्याख्या करते हुए कहा-- ***दुक्ख-निरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं, ... भावेतब्बं, ... भावितं।*** यह दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपदा है। इसकी भावना करनी चाहिए और यह भावित कर लिया गया। इस प्रकार इस चौथे आर्यसत्य को भी तीन परिवर्तों में देख कर इसको पूरी तरह जान जाता है।

विपश्यना भावना करते समय साधक ***ओळारिको*** यानी स्थूल से ***सुखुमा*** यानी सूक्ष्म की ओर जाता है। बुद्ध के उपदेश उसे स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले जाते हैं और फिर सूक्ष्मतर से सूक्ष्मतम की ओर, यानी, नाम और रूप के परे इंद्रियातीत निर्वाणिक अवस्था तक ले जाते हैं। साधक प्रज्ञप्ति- ***पञ्ञत्ति*** सत्य से प्रारंभ करता है, नाम और रूप के प्रत्यक्ष सत्य को देखते हुए स्थूल सत्य को अपनी अनुभूति के धरातल पर जान कर, उसका विघटन करता है, अनित्य की प्रज्ञा के आधार पर उसका विश्लेषण करता है और यों प्रज्ञप्ति सत्य से परमार्थ सत्य- ***निब्बानं परमं सुखं*** अर्थात निर्वाणिक अवस्था के परम सुख तक पहुँच जाता है।

बुद्ध की शिक्षा में संवेदना की बड़ी अहम भूमिका है। यह उनकी एक क्रांतिकारी खोज थी। मन में जो कुछ उत्पन्न होता है वह वेदना के रूप में शरीर पर प्रकट होता ही है- ***वेदनासमोसरणा सब्बे धम्मा।*** एक छोटा सा विचार भी मन में आता है तो शरीर पर उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप संवेदना होती है। अतः जब कोई संवेदना के साथ काम करता है तब वह स्वतः मन की गहराई में जाकर काम करता है अर्थात उसे गहराई में जाकर देखने लगता है।

बुद्ध का यह बड़ा आविष्कार था कि संवेदनाओं के प्रति हम ***तण्हा-*** तृष्णा पैदा करते रहते हैं। बुद्ध के पूर्व के आचार्यों को यह बात ज्ञात नहीं थी। बुद्ध के समय जो आचार्य थे उनको भी इसका ज्ञान नहीं था और न उनके बाद के आचार्यों को। वे लोगों को यही बताते थे कि इंद्रिय द्वारों पर जो पदार्थ आते हैं उन पर प्रतिक्रिया मत करो। अर्थात आंख से रूप देख कर, कान से शब्द सुन कर, नाक से गंध सूंघ कर... प्रतिक्रिया मत करो। बुद्ध ने कहा कि वस्तुतः कोई वस्तुओं के प्रति प्रतिक्रिया नहीं करता। इस बात को उन्होंने एक उदाहरण देकर समझाया-- कि एक काला बैल है एक उजला बैल है, वे रस्सी से बँधे हैं। न काला बैल बंधन है, न उजला बैल बंधन है बल्कि वह रस्सी बंधन है जिससे वे बँधे हैं। तृष्णा की रस्सी ही बंधन है और यह तृष्णा वेदना के कारण उत्पन्न होती है-- ***वेदनापच्चया तण्हा।*** इसी आविष्कार के कारण वे सम्यक संबुद्ध कहलाये। बुद्ध ने कहा कि जो प्रतीत्य-समुत्पाद को समझता है वह धर्म को समझता है। प्रकृति का यह नियम दुःखचक्र को विश्लेषित करता है तथा दुःखचक्र से बाहर होना सिखाता है।

उन्होंने कहा-- ***यो पटिच्चसमुप्पादं पस्सति सो धम्मं पस्सति, यो धम्मं पस्सति सो पटिच्चसमुप्पादं पस्सति।*** जो प्रतीत्य-समुत्पाद को जानता है वह धर्म को जानता है और जो धर्म को जानता है वह प्रतीत्य-समुत्पाद को जानता है।

प्रतीत्य-समुत्पाद में तीन महत्त्वपूर्ण कड़ियां हैं-- पहली है ***अविज्जापच्चया सङ्खारा,*** अर्थात अविद्या के प्रत्यय (कारण) से संस्कार उत्पन्न होते हैं। विगत में उत्पन्न किये गये संस्कार के कारण नाम और रूप उत्पन्न हुए, और इस समय (वर्तमान में) यदि अविद्या छायी हुई है, यानी, हम संवेदनाओं के स्वभाव को नहीं समझते तो तृष्णा ही उत्पन्न करते रहेंगे-- ***वेदनापच्चया तण्हा।*** तृष्णा से उपादान अर्थात गहरी आसक्ति होगी जो भविष्य में एक नया भव उत्पन्न करेगी। लेकिन यदि कोई अनित्य विद्या विकसित करे अर्थात यह जाने कि वेदना अनित्य है तो अविद्या नहीं रहेगी और इसी क्षण प्रतीत्य-समुत्पाद की कड़ी टूट जायगी। इस प्रकार वह जन्म-मरण के चक्र से बाहर आ जायगा। संवेदनाओं के साथ काम करके समस्या को जड़ से उखाड़ देगा, उसे वहीं काट देगा जहां तृष्णा उत्पन्न होती है।

जब तक वह संवेदनाओं के बारे में नहीं जानता तब तक यही जानता है कि बाह्य विषय ही राग-द्वेष के कारण हैं। उदाहरण स्वरूप एक शराबी यह समझता है कि वह शराब का आदी है, लेकिन वस्तुतः वह उन संवेदनाओं का आदी है जिन्हें वह शराब पीते समय अनुभव कर रहा है। संवेदनाओं की अनित्यता को जान कर यदि वह प्रज्ञा विकसित करता है तो प्रतिक्रियास्वरूप तृष्णाओं का संवर्धन नहीं करता। जब कोई इस प्रकार संवेदनाओं को देखता है तब वह अविद्या से बाहर निकलता है। वह प्रकृति के नियमों को समझता है, धम्म-नियामता को समझता है।

प्रतीत्य-समुत्पाद में वेदना एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है जहां से दो रास्ते फूटते हैं जो एक-दूसरे के विपरीत जाते हैं। यदि कोई सुखद या दुःखद वेदनाओं के प्रति अंधप्रतिक्रिया करता है तो वह राग और द्वेष के संस्कार पैदा करता रहता है। इस प्रकार वह अपने दुःख को बढ़ाता है, उसका संवर्धन करता है। परंतु यदि वह तटस्थ रहना सीखता है तब वह अपना स्वभाव पलटने लगता है और तब वह अचेतन मन की गहराई में दुःख के बाहर आने लगता है। वेदनाओं के प्रति तृष्णा दुःख का मूल कारण है। जब तक वह मूल यानी जड़ों की उपेक्षा करता है दुःख का विष-वृक्ष बढ़ता ही रहेगा, चाहे उसका धड़ कितनी ही बार क्यों न काटा जाता रहे। बुद्ध ने कहा--

***यथापि मूले अनुपद्दवे दळ्हे, छिन्नोपि रुक्खो पुनरेव रूहति।***
***एवम्पि तण्हानुसये अनूहते, निब्बत्तती दुक्खमिदं पुनप्पुनं।।***

*– धम्मपद ३३८*

-- जैसे वह पेड़ जिसकी जड़ें सुरक्षित हों, काट दिये जाने पर भी पुनः बढ़ जाता है। वैसे ही तृष्णारूपी अनुशय के (जड़ से) उच्छिन्न न होने पर यह दुःख बार-बार उत्पन्न होता रहता है।

मेरे गुरुजी सयाजी ऊ बा खिन बहुधा कहा करते थे कि सभी धर्मों का उद्देश्य मन की विशुद्धि प्राप्त करना है। मेरा भी उद्देश्य बुद्ध की शिक्षा के संपर्क में आने के पूर्व विकारों को दूर कर मन की विशुद्धि प्राप्त करना ही था। और जब मुझे संवेदना देखने के लिए कहा गया तो मन में संदेह हुआ कि इन संवेदनाओं को देखने से क्या होगा? इससे मेरे विकार कैसे दूर होंगे? सयाजी ने मुझे सत्य को अनुभव से देखना सिखाया और शरीर की संवेदनाओं के द्वारा सत्य की अनुभूति ने सद्यः फल दिया। तब मुझे विश्वास हो गया कि निस्संदेह संवेदना देखने का फल मिलने लगा है। संवेदनाओं की अनुभूति ने मुझमें विश्वास पैदा किया कि मैं मन की पूर्ण शुद्धता को प्राप्त कर सकता हूं।

तृष्णा वेदना के कारण उपजती है। बहुत लोग ऐसे हैं जो बुद्ध के अनुयायी नहीं है फिर भी मानते हैं कि तृष्णा दुःख का कारण है लेकिन उस महत्त्वपूर्ण कड़ी को वे नहीं जानते। कोई भी यह विचार नहीं करता कि तृष्णा का वेदना से क्या संबंध है। तृष्णा का शाब्दिक अर्थ है -- चाहना और उस चाहने को संवर्धित करना। जो प्रिय लगे उसके प्रति गहन आसक्ति और जो अप्रिय लगे उसे दूर धकेलने का उपक्रम। इसलिए तृष्णा का अर्थ वस्तुतः राग और द्वेष दोनों है। बुद्ध ने प्रमाणित किया कि तृष्णा का मूल कारण वेदना है।

इस अन्वेषण से उन्होंने हमें अपने अंदर मुक्ति के द्वार को खोलने की कुंजी दी। यह तर्कसंगत है कि यदि तृष्णा वेदना के कारण उत्पन्न होती है तो जो भी प्रयास तृष्णा के मूल को जानने के लिए किया जाय या इसे मिटाने के लिए किया जाय तो इसके लिए वेदना के बारे में विस्तार से जानना आवश्यक है। यानी यह तृष्णा कैसे राग पैदा करती है, कैसे द्वेष पैदा करती है और यह जानना भी आवश्यक है कि तृष्णा मिटाने के लिए इसका उपयोग कैसे किया जाय।

***समाहितो सम्पजानो, सतो बुद्धस्स सावको।***
***वेदना च पजानाति, वेदनानञ्च सम्भवं।।***

*''यत्थ चेता निरुज्झन्ति, मग्गञ्च खयगामिनं।*
*वेदनानं खया भिक्खु, निच्छातो परिनिब्बुतो''ति।।*

*– संयुक्तनिकाय २.४.२०२*

-- बुद्ध के श्रावक समाहित हैं, स्मृतिमान हैं और संप्रज्ञता संपन्न हैं, वे वेदना को, उसकी उत्पत्ति को, उसके निरोध को तथा निरोध के मार्ग को जानते हैं। भिक्षु वेदना का क्षय करके वितृष्ण हो जाता है, परिनिवृत्त हो जाता है। बुद्ध का अनुगामी समाधि, स्मृति और अनित्यता के संपूर्ण क्षेत्र को, वेदना को, वेदना के निरोध को और निरोधगामी मार्ग को भी जानता है।

एक अन्य सुत्त में वेदना के महत्त्व को निम्नलिखित शब्दों में दर्शाया गया है-- ***यं किञ्चि दुक्खं सम्भोति सब्बं वेदनापच्चयाति, अयमेकानुपस्सना। वेदनानं त्वेव असेसविरागनिरोधा नत्थि दुक्खस्स सम्भवोति, अयं दुतियानुपस्सना।***

*– सुत्तनिपात ७४२*

-- जो भी दुःख उत्पन्न होते हैं वे सभी वेदना के कारण हैं। यह विपश्यना या अनुपश्यना का प्रथम चरण है। वेदना के अशेष निरोध से दुःख उत्पन्न नहीं हो सकता यानी निर्वाणिक अवस्था अनुपश्यना का दूसरा चरण है।

अविद्या के अंधकार में एक स्वभाव बन जाता है जिसके कारण शरीर पर होने वाली संवेदना के प्रति कोई जान कर अथवा अनजाने ही राग या द्वेष करता है। इस प्रकार वह अपने स्वभाव का गुलाम हो जाता है और मन की गहराई में वेदनाओं के प्रति प्रतिक्रिया करता रहता है। अनुशय-क्लेश सुषुप्त ज्वालामुखी की तरह अंतर्मन में दबे रह जाते हैं जो कि वेदनाओं के प्रति सतत अंधप्रतिक्रिया करते रहते हैं। नाम और रूप की अनित्यता का सिर्फ बौद्धिक स्तर पर ज्ञान कुछ हद तक बुद्धि को परिशुद्ध कर सकता है। परंतु यह मन की गहराई में परिवर्तन नहीं ला सकता और हम अपने स्वभाव शिकंजे के गुलाम बने रहते हैं और निरा मूर्ख बन कर या निपट अज्ञानता में प्रतिक्रिया करते रहते हैं। बुद्ध अपने साधकों को स्पष्टरूप से निर्देश देते हैं -- ***सुखाय, भिक्खवे, वेदनाय रागानुसयो पहातब्बो, दुक्खाय वेदनाय पटिघानुसयो पहातब्बो, अदुक्खमसुखाय वेदनाय अविज्जानुसयो पहातब्बो।***

*– संयुक्तनिकाय २.४.२०३*

-- भिक्षुओ, सुख-वेदना का रागानुशय प्रहातव्य है, दुःखवेदना का प्रतिघानुशय प्रहातव्य है, अदुःख-असुख वेदना का अविद्यानुशय प्रहातव्य है। सभी प्रकार की संवेदनाओं को अनित्य अनुभव कर रागानुशय, द्वेषानुशय (प्रतिघानुशय) और मोहानुशय का प्रहाण करें।

भारत और भारत के बाहर जिस प्रकार की भी आध्यात्मिक विद्याएं हैं उनमें से कोई भी विकारों की जड़ों तक नहीं जातीं। राग और द्वेष की जड़ों तक जाकर उन्हें दूर नहीं करतीं। कोई भी ऐसी विधि नहीं है जो राग, द्वेष और मोह के अनुशय क्लेशों की इतनी दृढ़ता से व्याख्या कर सके। वेदना दुःख के समूल निराकरण की, इसको दूर करने की कुंजी है। यही बुद्ध का नया आविष्कार था। भारत या विश्व के आध्यात्मिक जगत में किसी का भी उपदेश बुद्ध जैसा नहीं था।

बुद्ध ने सतिपट्ठानसुत्त में कहा है-- ***आतापी सम्पजानो सतिमा।*** संप्रज्ञ होने का अर्थ निरंतर स्पष्टरूप से नाम और रूप की अनित्यता को जानते रहना है। वेदना शरीर पर महसूस होती है लेकिन वह मन या चित्त का भी एक हिस्सा है और वेदना की अनुपश्यना करने का अर्थ है-- नाम और रूप दोनों के प्रपंच को साक्षीभाव से देखना। निम्नलिखित उद्धरण से स्पष्ट है कि वेदना का अर्थ शरीर पर होने वाली विभिन्न संवेदनाओं से है। --

*यथापि वाता आकासे, वायन्ति विविधा पुथू।*
*पुरत्थिमा पच्छिमा चापि, उत्तरा अथ दक्खिणा।।*
*सरजा अरजा चपि, सीता उण्हा च एकदा।*
*अधिमत्ता परित्ता च, पुथू वायन्ति मालुता।।*
*तथेविमस्मिं कायस्मिं, समुप्पज्जन्ति वेदना।*
*सुखदुक्खसमुप्पत्ति, अदुक्खमसुखा च या।।*
*यतो च भिक्खु आतापी, सम्पजञ्ञं न रिञ्चति।*
*ततो सो वेदना सब्बा, परिजानाति पण्डितो।।*
*सो वेदना परिञ्ञाय, दिट्ठे धम्मे अनासवो।*
*कायस्स भेदा धम्मट्ठो, सङ्ख्यं नोपेति वेदगू'ति।।*

*– संयुक्तनिकाय २.४.२१४*

-- जैसे आकाश में विभिन्न प्रकार की हवाएं बहती हैं-- पूर्व से, पश्चिम से, उत्तर से और दक्षिण से भी; कभी धूलभरी, कभी धूलरहित, कभी ठंडी एवं कभी गर्म, कभी प्रचंड आंधी (झंझावात) की तरह और कभी धीर-धीरे भी बहुत प्रकार की हवाएं बहती हैं, उसी प्रकार शरीर में विभिन्न प्रकार की संवेदनाएं उत्पन्न होती हैं-- सुखद, दुःखद और असुखद-अदुःखद भी। जब कोई भिक्षु उत्साहपूर्वक विपश्यना करते हुए अपने संप्रज्ञान को नहीं छोड़ता अर्थात सभी प्रकार की वेदनाओं की अनित्यता को प्रज्ञापूर्वक जानते रहता है, तब वह प्रज्ञावान भिक्षु इसी जीवन में सभी विकारों से मुक्त हो जाता है। वेदना को पूर्णरूप से जान कर धर्म में स्थित हुआ वह वेदगू जीवन समाप्त होने पर अवर्णनीय अवस्था प्राप्त कर लेता है।

**तिकपट्ठान** के अध्ययन से स्पष्ट रूप से पता चलता है, जैसा कि भगवान बुद्ध ने कहा है -- (***कायिकं सुखं, कायिकं दुक्खं***) शरीर की संवेदनाओं का निर्वाण की प्राप्ति से बहुत गहरा संबंध है।

यही कारण है कि अरूप ब्रह्मलोक के ब्रह्मा विपश्यना का अभ्यास नहीं कर सकते। इसीलिए भगवान ने अपने पूर्व के ध्यानाचार्यों को धर्म का उपदेश नहीं किया। क्योंकि पांचवे से आठवें ध्यान तक मन शरीर से अलग हो जाता है और साधक को शारीरिक संवेदनाओं की अनुभूति नहीं होती। संवेदना की अनुभूति तभी होती है जबकि मन का शरीर से स्पर्श हो। यानी विपश्यना के अभ्यास के लिए शारीरिक संवेदना अत्यंत आवश्यक है।

अंत में मैं विनम्र प्रार्थना करता हूं कि यहां उपस्थित महानुभाव जो शारीरिक संवेदनाओं के महत्त्व को जानना चाहते हैं वे विपश्यना ध्यान को आजमा कर देखें और यह जानें और अनुभव करें कि विपश्यना ध्यान बुद्ध के उपदेशों के अनुसार है या नहीं।

मैं पुनः इस धर्ममयी मातृभूमि के प्रति असीम कृतज्ञता प्रकट करता हूं। यहां के भिक्षुसंघ के प्रति असीम कृतज्ञता प्रकट करता हूं जिन्होंने बुद्ध के उपदेशों को और उनकी सिखायी हुई विद्या को शुद्ध रूप में जीवित रखा और अपने आचार्य सयाजी ऊ बा खिन के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूं जिन्होंने मुझे इस अमूल्य धर्म का दान दिया। ऐसा धर्म जिसका अभ्यास करके न केवल मेरा कल्याण हुआ बल्कि विश्व के अनेक लोगों का कल्याण हो रहा है। इस विद्या का अभ्यास करके अधिक से अधिक लोग लाभान्वित हों, यही धर्म कामना है।

सब का मंगल हो!

कल्यामित्र,
सत्यनारायण गोयन्का

---

## मराठी भाषा में विपश्यना पत्रिका प्रारंभ

यह सूचित करते हुए हर्ष हो रहा है कि **मराठी** पत्रिका **'विपश्यना साधक'** नाम से रजिस्टर हो चुकी है और इसका प्रकाशन २५५८वीं. बुद्धपूर्णिमा पर प्रारंभ हो गया।

---

## मंगल मृत्यु

कलकत्ते के श्री मुकुंदराय बदानी वर्षों पहले धर्म से जुड़े और अनेक केंद्रों के संस्थापन एवं कोलकाता केंद्र-संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। यथासमय सहायक आचार्य तथा १९९८ में पूर्ण आचार्य नियुक्त हुए और अनेकों के कल्याण में सहायक हुए। पिछले कुछ वर्षों से पक्षाघात से पीड़ित हुए, फिरभी यथासंभव फोनादि से सेवा का काम करते रहे। अंत समय तक उन्होंने सभी कष्टों को धर्म-धैर्यपूर्वक सहन किया और गत २० मई को शरीर छोड़ दिया। उनके पुण्य कर्म निश्चित ही सुफलदायी होंगे। वे सुगति के भागीदार हों, धर्म-परिवार की यही मंगल कामना है।

---

## बुद्ध स्मृति पार्क (पटना) में सामूहिक साधना

**बुद्ध स्मृति पार्क** (पटना रेल्वे जंक्शन के सामने) **पटना** में प्रतिदिन प्रातः ८ से १०-०० बजे तक सामूहिक साधना एवं प्रवचन और ९ से ५ बजे तक हर घंटे गुरुदेव द्वारा स्वीकृत २० मिनट की आनापान की शिक्षा दी जा रही है। अधिक जानकारी के लिए **संपर्क-** श्री ओमप्रकाश मनरो, 09431142402.

**Registered No. NSK/235/2012-2014**

**WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2012-2014**

## नियुक्तियां

### वरिष्ठ सहायक आचार्य

१. श्री खगेश्वर अर्याल, नेपाल
२. श्री मोतिकाजी बज्राचार्य, नेपाल
३. सुश्री सुबर्ण कुमारी बज्राचार्य, नेपाल
४. श्री जय प्रसाद भेटवाल, नेपाल
५. सुश्री तारा डंगोल, नेपाल
६. श्री नर बहादुर गुरुङ, नेपाल
७. श्री मोतिलाल खनाल, नेपाल
८. श्री बाबुराजा महर्जन, नेपाल
९. सुश्री चंद्रदेवी मानंधर, नेपाल
१०. श्री देवकृष्ण मुंदडा, नेपाल
११. डॉ. यशोधरा प्रधान, नेपाल
१२. सुश्री तिमिला शिल्पकार, नेपाल
१३. श्रीमती रेबिका श्रेष्ठ, नेपाल
१४. श्रीमती कमला सुवाल, नेपाल
१५. सुश्री कमलतारा तुलाधर, नेपाल
१६. श्री योगेंद्रमणि तुलाधर, नेपाल
17. Mr. Sheldon Klein, Canada

### सहायक आचार्य

१. श्रीमती प्रगती ठुब्रीकर, नागपुर
२. श्री दत्तात्रय राउत, वर्धा
३. श्री अनिलकुमार बनसोड, नागपुर
४. श्री तेजराज शाक्य, नेपाल
५. श्री दुर्गानाथ अर्याल, नेपाल
६. श्री कमल प्रसाद प्रधान, नेपाल
७. श्री रामप्रसाद कोइराला, नेपाल
८. श्री बेखा मान महर्जन, नेपाल
९. श्रीमती बिष्णुमाया देवी अर्याल, नेपाल
१०. श्रीमती गीतादेवी पोखरेल, नेपाल
११. श्रीमती मिमा शाक्य, नेपाल
१२. श्रीमती शकुंतला अग्रवाल, नेपाल
13. Mrs. Asha Dias Gnawardhana, Sri Lanka
14. Mr. Haresh Patel, USA
15. Mr. Jamie Metzler, USA

### बालशिविर शिक्षक

१. श्री संजय नायक, भातपुरा, छत्तीसगढ़
२. श्री दीपक बोरकर, रायपुर, ''
३. श्रीमती हर्षिदा सोलंकी, रायपुर, ''
४. श्रीमती मालती मिश्रा, रायपुर, ''
५. श्री मुकेश तरानी, भिलाई, ''
६. श्रीमती राजकिशोरी, गोरखपुर, उ.प्र.
७. श्री रोहिताश्व नागपाल, शाहजहांपुर
८-९. श्री विनोद एवं श्रीमती कुसुम सोनी, मस्कत
१०. श्रीमती कश्मीरा शाह, मस्कत
११. सुश्री जैनाब अब्दुल्लाह, मस्कत
12. Mr Roland Abraham Germany
13. Mr Zhang Jian Chuan China
14. Mr Yang Dong Xuan China
15. Mr Liab Wei China
16. Mrs Sun Chun Yan China
17. Ms Zhangttui Yan China

## ग्लोबल विपश्यना पगोडा मुंबई में वर्ष २०१४-१५ के पालि पाठ्यक्रम

(२) १८-१० से १०-१२-१४ (आवासीय ३० दिवसीय सघन पालि अंग्रेजी पाठ्यक्रम)

**आवश्यक योग्यताएं–** जिन्होंने तीन-दस-दिवसीय तथा एक सतिपट्ठान शिविर किया है, जो गत एक वर्ष से नियमित रूप से विपश्यना का अभ्यास तथा पांच शीलों का पालन कर रहे हैं– वे आवेदन कर सकते है। क्षेत्रीय आचार्य की संस्तुति आवश्यक है।

(३) २८ जून २०१४ से २८ फरवरी १५ तक आठ महीने का (सप्ताह में एक बार सिर्फ शनिवार को १ बजे से ४ वजे तक, अनावासीय पाठ्यक्रम। इसमें सभी भाग ले सकते है। **विपश्यना शोध संस्थान** तथा **मुंबई विश्व विद्यालय** के दर्शन विभाग के संयुक्त तत्त्वावधान में २०१४-१५ में **एक वर्ष का डिप्लोमा** पाठ्यक्रम होगा जिसमें बुद्ध की शिक्षा का सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक पक्ष एवं व्यावहारिक जीवन में विपश्यना का विविध क्षेत्रों में उपयोग। **स्थानः** – ज्ञानेश्वर भवन, दर्शन विभाग, मुंबई विश्व विद्यालय, विद्यानगरी, कलीना कॅम्पस, शांताक्रूज (पू.) ४०००९८, टेलीफोनः – ०२२-२६५२७३३७.

**आवेदन पत्रः** – १ जुलाई से १५ जुलाई तक, सोमवार से शुक्रवार ११:३० बजे से २:३० के बीच दर्शन विभाग से प्राप्त किया जा सकता है। पाठ्यक्रम की अवधिः – १९ जुलाई २०१४ से मार्च २०१५ तक, प्रत्येक शनिवार को २:३० बजे से ६:३० शाम तक.

**अर्हताः** – आवेदक कम से कम १२ वीं कक्षा उर्त्तीण हों। उनके लिए दीवाली की छुट्टी में एक दस-दिवसीय विपश्यना शिविर करना अनिवार्य होगा। अधिक जानकारी के लिए– (१) विपश्यना विशोधन संस्थानः – कार्यालय – ०२२-३३७४७५६०, (२) श्रीमती वलजीत लांबा मो. ०९८३३५१८९७९, (३) आयुष्मती राजश्री मो. ०९००४६९८६४८, (४) डा. (श्रीमती) शारदा संघवी मो. ०९२२३४६२८०५.

## 2014 में निम्न अवसरों पर पूज्य माताजी के सान्निध्य में एक दिवसीय महाशिविर

**आषाढ़ी पूर्णिमा, रविवार, 13 जुलाई,** तथा **शरद पूर्णिमा** एवं **पूज्य गुरुदेव की पुण्य-तिथि** के उपलक्ष्य में **रविवार 28 सितंबर को; समयः** प्रातः **11** बजे से अपराह्न **4** बजे तक, **'ग्लोबल विपश्यना पगोडा'** में। यहां 3 बजे दिवंगत गुरुदेव के रेकार्डेड प्रवचन में बिना साधना किये लोग भी बैठ सकते हैं। बुकिंग के लिए कृपया निम्न फोन नंबरों या ईमेल से शीघ्र संपर्क करें। कृपया बिना बुकिंग कराये न आयें और **समग्गानं तपोसुखो**- सामूहिक तप-सुख का लाभ उठाएं। **संपर्कः** 022-28451170 022-337475/01/43/44- Extn. 9, **(फोन बुकिंग :** प्रातः **11** से सायं **5** तक, प्रतिदिन) **Online Registration: www.oneday.globalpagoda.org**


## दोहे धर्म के

मंगलमयी विपश्यना, निर्मल देय बनाय।
अंतर्मन के मैल सब, उखड़ उखड़ धुल जायँ॥

सुख-दुखमय संवेदना, समता स्थापित होय।
अंतर्मन की ग्रंथियां, सहज विमोचित होंय॥

देख दुखद संवेदना, भंगुर और अनित्य।
देख सुखद संवेदना, यह भी तो ना नित्य॥

कर्म-ग्रंथि की चित्त पर, जब उदीरणा होय।
तन पर हो संवेदना, मूरख समता खोय॥

साधक हो संवर करे, स्वतः निर्जरा होय।
यथाभूत दर्शन करे, ग्रंथि विमोचन होय॥

**केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड**
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोनः 2493 8893, फैक्सः 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

## दूहा धरम रा

विपस्सना री साधना, मंगळ हुयो सुयोग।
चित रै सुक्छम राग रा, छुटग्या सारा भोग॥

काया चित संवेदना, देखां धरम सुभाव।
विपस्सना रै तेज स्यूं, पिघळै पाप प्रभाव॥

अंतर री आंख्यां खुलै, प्रग्या जगै अनंत।
विपस्सना रै तेज स्यूं, गळज्या दुक्ख तुरंत॥

विपस्सना रै तेज स्यूं, प्रग्या जग्य जगाय।
राग द्वेस अर मोह नै, स्वाहा कर सुख पाय॥

चित्त ब्यथित ब्याकुल हुवै, मन असांत जद होय।
निरखत निरखत सांत हुवै, विपस्सना है सोय॥

**मोरया ट्रेडिंग कंपनी**
**सर्वो स्टॉकिस्ट - इंडियन ऑईल,** ७४, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.६, अजिंठा चौक, जलगांव - ४२५ ००३, फोन. नं. ०२५७-२२१०३७२, २२१२८७७
मोबा.०९४२३१८७३०१, Email: morolium_jal@yahoo.co.in
की मंगल कामनाओं सहित


'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-422 403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, 69- बी रोड, सातपुर, नाशिक-422 007. **बुद्धवर्ष 2558, ज्येष्ठ पूर्णिमा, 13 जून, 2014**

**वार्षिक शुल्क** रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/235/2012-2014**

WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2012-2014
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-

**विपश्यना विशोधन विन्यास**
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
**फोन :** (02553) 244076, 244086, 243712,
243238. **फैक्स :** (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org